



एग्री मैगज़ीन

(कृषि लेखों के लिए अंतरराष्ट्रीय ई-पत्रिका)

वर्ष: 02, अंक: 09 (सितम्बर, 2025)

www.agrimagazine.in पर ऑनलाइन उपलब्ध

© एग्री मैगज़ीन, आई. एस. एस. एन.: 3048-8656

दलहनी फसलों का आनुवंशिक सुधार: खाद्य-सुरक्षा की दिशा में एक कदम

अंशुमान सिंह¹, ललित ठाकुर², विक्रम सिंह गौड़³, आशुतोष शर्मा⁴ एवं चंद्र मोहन⁵

¹भारतीय कृषि सांख्यिकी अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, भारत

²डॉ. वाई.एस. परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, हि.प्र., भारत

³कृषि महाविद्यालय, बालाघाट, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर, म.प्र., भारत

⁴रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी, उ.प्र., भारत

⁵क्षेत्रीय मक्का अनुसंधान एवं बीज उत्पादन केंद्र, बेगूसराय, बिहार, भारत

*संवादी लेखक का ईमेल पता: drcmschauhan@gmail.com

दलहनी फसलें भारतीय कृषि एवं पोषण सुरक्षा की रीढ़ हैं। इनमें उच्च प्रोटीन, खनिज तत्व तथा सूक्ष्म पोषक तत्व पाए जाते हैं। पारंपरिक उत्पादन प्रणाली में कम उत्पादकता, रोग-कीट प्रकोप और जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों के कारण इनकी पैदावार सीमित रहती है। दलहनी फसलों के आनुवंशिक सुधार में कई आधुनिक तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। परंपरागत संकरण में दो अलग-अलग पौधों को मिलाकर बेहतर गुणों वाली नई किस्म विकसित की जाती है। आणविक प्रजनन में वैज्ञानिक डी.एन.ए. मार्करों का उपयोग करके वांछित जीन का चयन करते हैं, जिससे प्रजनन प्रक्रिया तेज और सटीक हो जाती है। जीन-संपादन जैसी नई तकनीकों से विशिष्ट जीनों को सटीक रूप से बदला जा सकता है, जिससे रोग प्रतिरोधक क्षमता और पोषण मूल्य में सुधार होता है। ये सभी तकनीकें दलहनी फसलों की उत्पादकता को बढ़ाने, उन्हें रोगों से बचाने और उनके पोषण मूल्य को बढ़ाने में मदद करती हैं। इस प्रकार, आनुवंशिक सुधार न केवल किसानों की आय बढ़ा रहा है, बल्कि भारत में खाद्य और पोषण सुरक्षा को भी मजबूत कर रहा है। भविष्य में, ये तकनीकें और भी अधिक कुशल और पौष्टिक दलहन किस्में विकसित करने में सहायक होंगी, जिससे हमारी खाद्य प्रणाली और अधिक मजबूत हो सकेगी।

मुख्य-शब्द: दलहनी फसलें, आनुवंशिक सुधार, आणविक प्रजनन, जैव-प्रौद्योगिकी, जलवायु सहनशीलता, पोषण संवर्धन

परिचय

दलहन फसलें जिनमें अरहर, मूंग, उड़द, चना और मसूर शामिल हैं, भारतीय आहार में प्रोटीन, खनिज और अन्य आवश्यक पोषक तत्वों के प्रमुख स्रोत हैं। ये फसलें न केवल ग्रामीण, बल्कि शहरी आबादी के लिए भी पोषण सुरक्षा की रीढ़ हैं। पारंपरिक खेती की पद्धतियाँ और प्रजनन के सीमित तरीके, जैसे कि पारंपरिक संकरण, इन फसलों की पैदावार में अपेक्षित सुधार लाने में असमर्थ रहे हैं। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए, वैज्ञानिकों ने आनुवंशिक सुधार की आधुनिक तकनीकों का सहारा लिया है। ये तकनीकें पारंपरिक विधियों की तुलना में अधिक कुशल और लक्षित होती हैं। इनका उद्देश्य न केवल पैदावार बढ़ाना है, बल्कि पौधों में रोग और कीट प्रतिरोधक क्षमता, सूखा और गर्मी जैसी जलवायु अनुकूलन क्षमता, और पोषण गुणवत्ता को भी बेहतर बनाना है। इस दिशा में, आणविक प्रजनन, जीन-संपादन और जैव-प्रौद्योगिकी जैसी विधियाँ क्रांतिकारी बदलाव ला रही हैं। आणविक प्रजनन के माध्यम से प्रजनन प्रक्रिया में लगने वाला समय काफी कम हो जाता है। इसी तरह क्रिस्पर कास-9 जैसी जीन संपादन तकनीकें शोधकर्ताओं को पौधों के जीनोम में सटीक बदलाव करने की अनुमति देती हैं, जिससे विशेष गुणों को जोड़ा या हटाया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक विशिष्ट जीन को निष्क्रिय करके किसी रोग के प्रति पौधे की संवेदनशीलता को कम किया जा सकता है। इन आधुनिक तकनीकों से प्राप्त होने वाली नई किस्में न केवल अधिक उपज देती हैं, बल्कि उनमें प्रोटीन और सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा भी अधिक होती है। इससे किसानों की आय में वृद्धि होती है और साथ ही उपभोक्ताओं को भी बेहतर पोषण मिलता है। दलहनी फसलों का आनुवंशिक सुधार केवल कृषि उत्पादन में वृद्धि तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह सीधे तौर पर भारत की खाद्य और पोषण सुरक्षा को मजबूत करने में एक महत्वपूर्ण कदम है।

तालिका-1: भारत में प्रमुख दलहनी फसलें एवं उनका महत्व

फसल	पोषण महत्व	प्रमुख क्षेत्र
चना	उच्च प्रोटीन, फोलिक एसिड	मध्य प्रदेश, राजस्थान
अरहर	प्रोटीन, फाइबर	महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश
मूंग	आयरन, विटामिन	राजस्थान, आंध्र प्रदेश
उड़द	प्रोटीन, खनिज	उत्तर प्रदेश, बिहार
मसूर	जिंक, आयरन	मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश

आनुवंशिक सुधार की आवश्यकता

भारत में दलहन की खेती के लिए आनुवंशिक सुधार की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि वर्तमान में इसकी औसत उत्पादकता वैश्विक मानकों से काफी कम है। यह एक गंभीर चुनौती है खासकर जब हम अपनी विशाल और बढ़ती हुई आबादी की पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा करने की बात करते हैं। दलहनी फसलें जैसे— अरहर में उकठा रोग और चने में फली छेदक कीट भारी नुकसान पहुँचाते हैं। इन चुनौतियों से निपटने के लिए आनुवंशिक सुधार तकनीकों का उपयोग कर ऐसी किस्में विकसित की जा सकती हैं जिनमें इन रोगों और कीटों के प्रति प्राकृतिक प्रतिरोध हो। इससे न केवल फसल की सुरक्षा होती है, बल्कि रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता भी कम होती है, जिससे पर्यावरण को भी लाभ होता है। जलवायु परिवर्तन और अनियमित वर्षा ने कृषि के लिए नई चुनौतियाँ पेश की हैं। सूखे और बाढ़ जैसी चरम मौसमी घटनाएँ दलहनी फसलों की खेती को जोखिम भरा बना देती हैं। आनुवंशिक सुधार के माध्यम से हम ऐसी किस्में विकसित कर सकते हैं जो सूखे या अत्यधिक तापमान को सहन कर सकें। उदाहरण के लिए, सूखे की स्थिति में भी जीवित रहने और पैदावार देने की क्षमता वाले जीनों को पौधों में डाला जा सकता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम किया जा सके। पोषण सुरक्षा के लिए प्रोटीन और सूक्ष्म पोषक तत्वों का संवर्धन अनिवार्य है। आनुवंशिक सुधार की तकनीकें जैसे कि बायोफोर्टिफिकेशन हमें ऐसी दालें विकसित करने में सक्षम बनाती हैं जिनमें इन आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा अधिक हो। यह कुपोषण की समस्या को दूर करने में एक बड़ा कदम साबित हो सकता है, विशेष रूप से बच्चों और महिलाओं में। दलहनी फसलों की पैदावार में स्थिरता और वृद्धि लाने, उन्हें जलवायु परिवर्तन के लिए अनुकूल बनाने और उनके पोषण मूल्य को बढ़ाने के लिए आनुवंशिक सुधार एक आवश्यक उपकरण है। यह न केवल किसानों के लिए आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करता है बल्कि देश की समग्र खाद्य और पोषण सुरक्षा को भी मजबूत करता है।

तालिका-2: आनुवंशिक सुधार से प्राप्त संभावित लाभ

लक्षण	पारंपरिक किस्में	सुधरी हुई किस्में
उपज	8–10 क्विंटल/हेक्टेयर	15–18 क्विंटल/हेक्टेयर
रोग प्रतिरोध	सीमित	उच्च स्तर पर प्रतिरोधक
पोषण गुणवत्ता	सामान्य प्रोटीन स्तर	लौह, जिंक एवं प्रोटीन संवर्धन
जलवायु सहनशीलता	कम	अधिक सूखा एवं लवणीयता सहनशील

आनुवंशिक सुधार की प्रमुख तकनीकें

भारत में दलहनी फसलों की पैदावार बढ़ाने, उन्हें रोगों और कीटों से बचाने और उनके पोषण मूल्य को सुधारने के लिए आनुवंशिक सुधार की विभिन्न तकनीकों का उपयोग किया जाता है। ये तकनीकें पारंपरिक विधियों से लेकर आधुनिक आणविक और जैव-प्रौद्योगिकी विधियों तक फैली हुई हैं, और प्रत्येक का अपना विशेष महत्व है।

तालिका-3: दलहनी फसलों की आनुवंशिक सुधार तकनीकें

प्रौद्योगिकी	उद्देश्य	उदाहरण
परंपरागत संकरण	उच्च उपज, रोग प्रतिरोध	संकर अरहर
म्यूटेशन प्रजनन	नई विविधता उत्पन्न करना	म्यूटेंट मसूर
आणविक प्रजनन	सूक्ष्म तत्व संवर्धन	बायोफोर्टिफाइड चना
जीन-संपादन	लक्षित सुधार	क्रिस्पर आधारित अरहर
जैव-प्रौद्योगिकी	रोग-प्रतिरोधक क्षमता	बी.टी.-लोबिया

परंपरागत संकरण एवं चयन: परंपरागत संकरण आनुवंशिक सुधार की सबसे पुरानी और सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली विधि है। इसमें दो अलग-अलग पौधों, जिनमें से प्रत्येक में कुछ वांछित गुण होते हैं, का क्रॉस-परागण कराया जाता है। इस प्रक्रिया से प्राप्त संकर पौधों में दोनों जनक पौधों के गुण आते हैं। इसके बाद बेहतर गुणों वाले पौधों का चयन किया जाता है और उनकी आगे की पीढ़ियों में इन गुणों को स्थिर किया जाता है। उदाहरणरूप चना की एक किस्म, जिसमें उच्च पैदावार होती है और दूसरी किस्म, जिसमें सूखे के प्रति प्रतिरोध होता है, के बीच संकरण कराकर एक नई किस्म विकसित की जा सकती है जो दोनों गुणों को दर्शाती है।

म्यूटेशन प्रजनन: म्यूटेशन प्रजनन में पौधों में आनुवंशिक उत्परिवर्तन पैदा किए जाते हैं। ये उत्परिवर्तन भौतिक या रासायनिक कारकों का उपयोग करके प्रेरित किए जाते हैं। इन उत्परिवर्तनों से नए और उपयोगी गुण पैदा हो सकते हैं, जैसे कि रोग प्रतिरोध या बेहतर पोषण मूल्य। मूंग की एक किस्म पूसा विशाल, जो कि म्यूटेशन प्रजनन द्वारा विकसित की गई है जिसमें अन्य किस्मों की तुलना में बेहतर उपज और रोग प्रतिरोधक क्षमता पाई जाती है। यह तकनीक उन पौधों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है जहाँ वांछित गुण प्राकृतिक रूप से उपलब्ध नहीं होते।

आणविक प्रजनन: आणविक प्रजनन एक आधुनिक तकनीक है जो डीएनए मार्करों का उपयोग करती है। ये मार्कर डी.एन.ए. के छोटे खंड होते हैं जो किसी विशेष वांछित जीन से जुड़े होते हैं। पारंपरिक प्रजनन के विपरीत, जिसमें पौधे के गुणों को देखने के लिए कई वर्षों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है, इस तकनीक में वैज्ञानिक सीधे डी.एन.ए. का विश्लेषण करके यह पता लगा सकते हैं कि पौधे में वांछित जीन मौजूद है या नहीं। चने में उकठा रोग के प्रति प्रतिरोधक जीन की पहचान के लिए आणविक मार्करों का उपयोग किया जा सकता है। इससे वैज्ञानिक केवल उन पौधों का चयन कर सकते हैं जिनमें यह जीन मौजूद है जिससे प्रजनन प्रक्रिया बहुत तेज हो जाती है।

जीन-संपादन (क्रिस्पर कास-9): जीन-संपादन सबसे क्रांतिकारी तकनीकों में से एक है। क्रिस्पर कास-9 जैसी तकनीकें वैज्ञानिकों को पौधों के जीनोम में सटीक बदलाव करने की अनुमति देती हैं। इसके जरिए, किसी विशिष्ट जीन को जोड़ा, हटाया, या संशोधित किया जा सकता है, जिससे वांछित गुण पैदा होते हैं। यह तकनीक पारंपरिक विधियों की तुलना में

बहुत सटीक और कुशल है। सोयाबीन में तेल की गुणवत्ता को सुधारने के लिए क्रिस्पर का उपयोग किया गया है। इसके जरिए, उन जीनों को निष्क्रिय किया जा सकता है जो अवांछित फैटी एसिड का उत्पादन करते हैं जिससे बेहतर गुणवत्ता वाला तेल प्राप्त होता है।

आनुवंशिक इंजीनियरिंग: आनुवंशिक इंजीनियरिंग के अंतर्गत एक जीव से जीन को निकालकर दूसरे जीव में डाला जाता है। यह तकनीक पौधों को ऐसे गुण प्रदान कर सकती है जो प्राकृतिक रूप से उनमें नहीं पाए जाते। आनुवंशिक रूप से संशोधित कपास में कीट प्रतिरोधक क्षमता के लिए बीटी जीन डाला गया है। इसी तरह, दलहनी फसलों में भी कीट और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए बाहरी जीन का उपयोग किया जा सकता है। यह तकनीक विशेष रूप से कीटों और रोगों के बड़े प्रकोप से निपटने में सहायक होती है जिससे किसानों का नुकसान कम होता है और पैदावार बढ़ती है।

दलहनी फसलों के आनुवंशिक सुधार में उपलब्धियाँ और सफल उदाहरण

भारत ने दलहनी फसलों के आनुवंशिक सुधार में महत्वपूर्ण प्रगति की है, जिससे न केवल पैदावार बढ़ी है बल्कि उनकी गुणवत्ता और पर्यावरणीय अनुकूलन क्षमता में भी सुधार हुआ है। इन सफलताओं ने किसानों और उपभोक्ताओं दोनों को लाभ पहुँचाया है।

चना: चना भारत की सबसे महत्वपूर्ण दलहनी फसल है, जिसकी खेती अक्सर कम वर्षा वाले क्षेत्रों में की जाती है। पारंपरिक किस्मों में पानी की कमी के कारण पैदावार कम होती थी। वैज्ञानिकों ने आणविक प्रजनन और पारंपरिक संकरण का उपयोग कर ऐसी किस्में विकसित की हैं जो सूखे की स्थिति में भी अच्छी पैदावार दे सकती हैं। पूसा-1103, जी.एन.-149 और पूसा-3022 जैसी किस्में सूखे के प्रति अधिक सहनशील हैं। इन किस्मों में गहरी जड़ प्रणाली होती है, जो मिट्टी की निचली परतों से भी नमी खींच सकती है। इसके अलावा, इनमें रोग प्रतिरोधक क्षमता भी अधिक होती है, जिससे फसल का नुकसान कम होता है। इन किस्मों के कारण किसानों को अनिश्चित जलवायु परिस्थितियों में भी स्थिर पैदावार मिल पाती है।

अरहर: अरहर, जिसे शतुअर दाल भी कहते हैं, भारत में एक और प्रमुख दलहनी फसल है। इसकी पैदावार बढ़ाने के लिए संकर किस्में विकसित करना एक बड़ी सफलता रही है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने आई.सी.पी.एच.-2671 और आई.सी.एस.-33004 जैसी संकर किस्में विकसित की हैं। आई.सी.पी.एच.-2671 ने पारंपरिक किस्मों की तुलना में 30: से 40: तक अधिक पैदावार दी है। ये संकर किस्में अधिक वृद्धि दिखाती हैं और कीटों के प्रति अधिक सहनशील होती हैं। अरहर में संकर किस्मों का विकास एक मील का पथर है क्योंकि यह इस फसल में उपज क्षमता को एक नए स्तर पर ले गया है।

मूंग और उड़द: मूंग और उड़द दोनों ही कम अवधि की फसलें हैं और इनमें वायरस जनित रोगों का प्रकोप आम है, जैसे पीला मोजेक वायरस। इस रोग से फसल को भारी नुकसान होता था। उदाहरणरू वैज्ञानिकों ने पारंपरिक प्रजनन और आणविक मार्कर आधारित चयन का उपयोग कर पूसा विशाल और पूसा-1334 जैसी किस्में विकसित की हैं जो पीला मोजेक वायरस के प्रति प्रतिरोधी हैं। ये किस्में न केवल रोग से सुरक्षित रहती हैं, बल्कि अच्छी उपज भी देती हैं, जिससे किसानों को होने वाला नुकसान कम होता है। इन रोग प्रतिरोधी किस्मों ने किसानों को बिना किसी बड़े जोखिम के इन फसलों की खेती करने का आत्मविश्वास दिया है।

मसूर: कुपोषण, विशेषकर लौह और जिंक की कमी, भारत में एक प्रमुख स्वास्थ्य समस्या है। मसूर को बायोफोर्टिफिकेशन के लिए एक आदर्श फसल माना जाता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने बायोफोर्टिफिकेशन तकनीक का उपयोग करके मसूर की ऐसी किस्में विकसित की हैं जिनमें लौह और जिंक की मात्रा अधिक होती है। इनमें पूसा वैभव और आई.पी.एल.-406 जैसी किस्में शामिल हैं। ये किस्में न केवल पोषण की कमी को दूर करने में सहायक हैं, बल्कि इनमें उच्च प्रोटीन सामग्री भी होती है। इस तरह मसूर का आनुवंशिक सुधार खाद्य सुरक्षा के साथ-साथ पोषण सुरक्षा में भी योगदान दे रहा है।

निष्कर्ष

दलहनी फसलों का आनुवंशिक सुधार भारतीय कृषि के भविष्य के लिए एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। पारंपरिक खेती की सीमाओं को पार करते हुए, आधुनिक तकनीकें जैसे आणविक प्रजनन, जीन-संपादन और जैव-प्रौद्योगिकी ने इन फसलों की उत्पादकता और गुणवत्ता में क्रांतिकारी बदलाव लाए हैं। इन तकनीकों के माध्यम से विकसित की गई सूखा-सहनशील, रोग-प्रतिरोधी और पोषण से भरपूर किस्में भारतीय किसानों के लिए एक बड़ी सफलता साबित हुई हैं। यह प्रक्रिया न केवल किसानों को अस्थिर मौसम और कीटों के प्रकोप से होने वाले नुकसान से बचाती है, बल्कि उन्हें अधिक और स्थिर पैदावार भी सुनिश्चित करती है। इसका सीधा प्रभाव उनकी आय पर पड़ता है, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलती है। इसके अलावा, आनुवंशिक रूप से सुधारी गई दालें, जिनमें प्रोटीन और सूक्ष्म पोषक तत्व (जैसे लौह और जिंक) की मात्रा अधिक होती है, कुपोषण की समस्या को दूर करने में सहायक हैं।



भविष्य की संभावनाएँ

दलहनी फसलों के आनुवंशिक सुधार का भविष्य आशाजनक है, जिसमें कई नई संभावनाएँ और रणनीतियाँ शामिल हैं जो भारत की खाद्य सुरक्षा को और भी मजबूत कर सकती हैं। आने वाले समय में यह क्षेत्र पारंपरिक तरीकों से परे जाकर अत्याधुनिक तकनीकों पर ध्यान केंद्रित करेगा ताकि स्थायी कृषि विकास सुनिश्चित हो सके। भविष्य की एक प्रमुख दिशा जीनोमिक्स और बायोइन्फॉर्मेटिक्स पर आधारित प्रजनन को बढ़ावा देना है। इन तकनीकों का उपयोग करके वैज्ञानिक दलहनी फसलों के जीनोम का व्यापक अध्ययन कर सकते हैं, जिससे वांछित गुणों से जुड़े विशिष्ट जीनों की पहचान करना और उन्हें लक्षित करना आसान हो जाएगा। यह प्रक्रिया प्रजनन चक्र को काफी छोटा कर देगी और अधिक कुशल किस्मों के विकास में मदद करेगी। एक और महत्वपूर्ण लक्ष्य जलवायु-स्मार्ट दालों का विकास करना है। जैसे-जैसे जलवायु परिवर्तन से तापमान और वर्षा पैटर्न में बदलाव हो रहा है, ऐसी किस्मों की आवश्यकता है जो इन चरम स्थितियों जैसे- सूखे, बाढ़ और अत्यधिक गर्मी, का सामना कर सकें।